e-ISSN:2582 - 7219

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

IN SCIENCE, ENGINEERING AND TECHNOLOGY

Volume 4, Issue 7, July 2021

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA

Impact Factor: 4.988

International Journal Of Multidisciplinary Research in Science, Engineering and Technology (IJMRSET)

| ISSN: 2582-7219 | www.ijmrset.com | Impact Factor: 5.928|

| Volume 4, Issue 7, July 2021 |

| DOI:10.15680/IJMRSET.2021.0407034 |

चोल कला का भारतीय स्थापत्य में योगदान

चंद्रपाल जांदू

इतिहास, डॉ. भीमराव अंबेडकर राजकीय महाविद्यालय, श्रीगंगानगर

सार

चोल वंश दक्षिणी भारत के इतिहास में सबसे लंबे समय तक राज करने वाले राजवंशों में से एक था, उन्होंने लंबे समय तक चलने वाले पत्थर के मंदिरों और उत्तम कांस्य की मूर्तियों के निर्माण में अपने व्यापक विजय के माध्यम से अर्जित अपनी विलक्षण संपत्ति का उपयोग किया। चोल कला और वास्तुकला पर पल्लवों और अन्य समकालीन कला और वास्तुकला स्कूलों का प्रभाव था, जिससे उन्हें द्रविड़ रूप को और अधिक ऊंचाइयों तक ले जाने में मदद मिली। विस्तृत रूप से नीचे चर्चा की गई चोल कला और वास्तुकला के विभिन्न रूप हैं।

परिचय

चोल कला और मूर्तिकला शैली पल्लवों के समान हैं, अधिकांश मंदिरों में संरचनाओं को पत्थर और धातु से तराशा गया था। वे चोल काल के सामाजिक धार्मिक विचारों को चित्रित करते हैं, नटराज मूर्तिकला न केवल अपनी सुंदरता के लिए बल्कि अपने आध्यात्मिक अर्थ के लिए भी विश्व प्रसिद्ध है। वैष्णव मंदिरों या अलवरों में विष्णु की मूर्तियों के मूर्तिक निरूपण में एक खास तरह की आध्यात्मिक शांति है। इंपीरियल चोल के मंदिर अति सुंदर अच्छी तरह से निर्मित मूर्तियों और भित्तिचित्रों से आच्छादित हैं। कलाकारों ने खोई हुई मोम तकनीक का इस्तेमाल किया और संपूर्ण भारतीय शिल्पा शास्त्र का पालन किया। इस अवधि के दौरान मूर्तियां चोल काल के सांस्कृतिक प्रतीक के रूप में वर्णित हैं और चोल कला का सबसे अच्छा नमूना हैं।[1,2]

चित्रों की कला उनके समय में विकसित हुई और इस तरह आंकड़े बहुत यथार्थवाद के साथ चित्रित किए गए। चिदंबरम में राजा राजेश्वर मंदिर और गंगाईकोंडा चोलापुरम मंदिर और नटराज मंदिर की आंतरिक दीवारों पर चित्रित पुराणों के विषय थे। माना जाता है कि मार्को पोलो तंजावुर के बृहदेश्वरार मंदिर में है। आकाशीय नर्तकियों के साथ लौकिक नृत्य रूप में भगवान शिव की एक कल्पना भी है जो गंगाईकोंडा चोलपुरम मंदिर की दीवारों पर भी मिलती है।[3,4]

चोलों ने भी मुखर और वाद्य संगीत के विकास में योगदान दिया। कुदामुला, वीणा और बांसुरी जैसे उपकरणों का इस्तेमाल किया गया था और देवदास विशेषज्ञ संगीतकार और गायक थे। भरतनाट्यम और कथकली के शास्त्रीय नृत्य रूपों ने नाट्य शास्त्र में ऋषि भरत के नियमों के आधार पर चोल संरक्षण के तहत अपना आधार प्राप्त किया। उत्सव के समय में नृत्य नाटकों का मंचन भी किया गया और चोल राजाओं ने नृत्य कला को बढ़ावा देने के लिए बंदोबस्त किए। चोलों ने नाटक की कला को भी बढ़ावा दिया और कलाकारों को चोल राजाओं से सम्मान मिला। उस काल की कला और संस्कृति का विस्तार करने वाले मंदिरों की दीवारों पर कई शिलालेख हैं। चोल साहित्य ने उस युग के इन शानदार सांस्कृतिक पहलुओं के बारे में बताया।[5,6]
चोल वास्तुकला की एक विशेष विशेषता कलात्मक परंपरा की शुद्धता है। 11 वीं शताब्दी की शुरुआत में, तंजावुर में दो शानदार मंदिर और तिरुचिरापल्ली जिले में गंगाईकोंडा चोलापुरम में चोल कला और वास्तुकला का सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन होता है। पल्लवों द्वारा शुरू की गई द्रविड़ियन विशेषता ने चोलों के तहत शास्त्रीय रूपों और विशेषताओं का अधिग्रहण किया जैसे कि गोपुरम, मंडपम और विमन। प्रारंभ में, गोपुरम सुविधाएँ अधिक प्रमुख थीं लेकिन बाद के चरणों में, विमन ने सबसे आगे ले लिया। चोल मंदिरों के गर्भगृह आकार में वृत्ताकार और वर्गाकार दोनों थे और भीतर के गर्भगृह की दीवारें सुशोभित थीं। गर्भगृह के ऊपरी ओर विशेष आकार के गुंबद हैं जो गुंबद के शीर्ष पर गुंबद के आकार के शिखर और कलश के साथ बनाए गए हैं। बृहदेश्वर मंदिर गर्भगृह के चारों ओर के मार्ग की दीवारें अति सुंदर चित्रों के पैनलों से आच्छादित हैं, हालांकि समय के साथ बेहोश अभिव्यक्ति दिखाती है। इस मंदिर की भीतरी दीवारों पर उकेरे गए शिव के 108 नृत्य क्षेत्र में चोलों द्वारा प्राप्त ऊँचाइयों को प्रमाणित करते हैं। कला और वास्तुकला का। यह मंदिर चोल शिल्पकारों की बेहतरीन रचना के रूप में जाना जाता है।
चोलों का कला और वास्तुकला में एक समृद्ध इतिहास है और उनके नमूने अभी भी हमारे बीच संग्रहालयों या मंदिरों में मौजूद हैं। उन्होंने न केवल भारत में बल्कि विदेशों में भी ख्याति अर्जित की है। उनकी शैली अद्वितीय थी जिसने मंदिर निर्माण की पूरी शैली को एक प्रेरणा दी[7,8]

| ISSN: 2582-7219 | www.ijmrset.com | Impact Factor: 5.928|

| Volume 4, Issue 7, July 2021 |

| DOI:10.15680/IJMRSET.2021.0407034 |

विचार-विमर्श

चोल शासकों ने द्रविड़ शैली के अंतर्गत ईंटों की जगह पत्थरों और शिलाओं का प्रयोग कर ऐसे-ऐसे मंदिर बनाए, जिनका अनुकरण पड़ोसी राज्यों एवं देशों तक ने किया।चोल इतिहास के प्रथम चरण (विजयालय से लेकर उत्तम चोल) में तिरुकट्टलाई का सुंदेश्वर मंदिर, कन्नूर का बालसुब्रह्मण्यम मंदिर, नरतमालै का विजयालय मंदिर, कुंभकोणम का नागेश्वर मंदिर तथा कदम्बर- मलाई मंदिर आदि का निर्माण हुआ।महान चोलों (राजराज-से कुलोतुंग-III तक) के दौर में तंजावुर में वृहदेश्वर मंदिर तथा गंगईकोंड चोलपुरम का शिव मंदिर (राजेन्द्र प्रथम का) ख्याति प्राप्त हैं।इन दोनों मंदिरों को देखकर कहा गया कि "उन्होंने दैत्यों के समान कल्पना की और जौहरियों के समान उसे पूरा किया।" (They concept like Giants and they Finished Like Jewellers).इन दोनों के अलावा दारासुरम का ऐरावतेश्वर और त्रिभुवनम का कम्पहरेश्वर मंदिर भी सुंदर एवं भव्य हैं।चोल स्थापत्य की सबसे बड़ी खासियत है कि उन्होंने वास्तुकला में मूर्तिकला और चित्रकला का भी बेजोड़ संगम किया।चोलयुगीन मूर्तियों में नटराज की कांस्य प्रतिमा सर्वोत्कृष्ट है। इसे चोल कला का सांस्कृतिक निकष (कसौटी) कहा गया है। दक्षिण भारत में चोल राजवंश का राज्यकाल (850 ई - 1250 ई) कला एवं स्थापत्य के सतत समृद्धि का युग था। चोल राजाओं ने अपनी विस्तृत विजयों से प्राप्त धन-सम्पदा का उपयोग दीर्घायु प्रस्तर मन्दिरों के निर्माण तथा कांस्य की मूर्तियों के निर्माण में किया।[9,10]

परिणाम

चोल युगीन कला-दक्षिण भारतीय कला के अन्तर्गत चोलयुगीन कला अपने पूर्व युग की कला से भी बहुत आगे बढ़ गई थी। चोल वंशी महान् शासकों की विजय पताका दक्षिण भारत के एक बड़े भू-भाग में ही नहीं भारतीय सागर को द्वीपों पर भी फहरा रही थी। जहाँ तक चोलकालीन कला का प्रश्न है इन शासकों के समय में दक्षिण में अनेक भव्य मन्दिरों का निर्माण हुआ। तंजौर का विशाल राजराजेश्वर मन्दिर इसी काल में निर्मित हुआ था। चिदम्बरम् मदुरै और कांची के अनेक विशाल एवं भव्य मन्दिर इसी काल में निर्मित हुए। ये सभी दक्षिणापत्य (द्रविण) शैली के हैं इन पर मूर्ति कला का बहुमुखी एवं व्यापक चित्रण मिलता है। चोल कालीन मूर्तिकला पौराणिक धर्मों का विस्तृत आयाम प्रस्तुत करती है। प्रतिमाओं के निर्माण में ग्रेनाइट पत्थर का विशेष प्रयोग हुआ है। मूर्तियों के कला एवं भावपक्ष दोनों का अद्‌भुत समन्वय विशेष उल्लेखनीय हैं। बारहवीं शती के शुरुआत में मैसूर में होयसल वंश का शासन था।[11,12]

इस वंश के शासनकाल हलेविड में होयसलेश्वर मन्दिर का निर्माण हुआ। उस पर पौराणिक कथाएँ बारीकी से उकेरी हुई है। बाहर से यह विशाल मन्दिर अतिशय अलंकृत है। इसी प्रकार का अन्य मन्दिर बेलूर में हैं। चोल शासन काल में ललित कलाओं के कतिपय मानक स्थापित हुए। इनमें पूर्ववर्ती परम्परा के मुख्य तत्वों को ग्रहण कर अनेक मौलिक विचारों और अलंकार विधाओं की उद्भावना की गयी। कांची तथा अन्य अनेक कला केन्द्रों को चोलों ने नयी विधाओं से मंडित किया। वस्तुगत विशालता तथा मूर्तिकला में सफलता के साथ-भाव-भंगिमाओं तथा अलंकरणों का विधान चोल-कला में मुखर हुआ। मानव के क्रिया-कलापों के साथ प्रकृति में स्वच्छन्द विचरण करने वाले पशु-पक्षी और लता-वृक्ष इस कला में दृष्टव्य हैं।

कांची और चोल मण्डल के अन्य कई के केंद्रों के देवालयों में वास्तुशिल्प, मूर्तिकला और चित्रकला का समन्वय प्रभावोत्पादक ढंग से दर्शाया गया। रामायण, महाभारत तथा भागवतादि पुराणों की अनेक लोकप्रिय कथाओं को इन मन्दिरों में कलाकारों ने शाश्वत रूप प्रदान किये। श्रीरामचरित मानस के अनेक दुर्लभ प्रसंग का इस काल में उपलब्ध हैं, जो भारत के अन्य क्षेत्र में प्राप्त नहीं हैं। कडियूर के शिवालय में दशरथ के पुत्रेष्टि यज्ञ तथा राम-सीता विवाह के अत्यन्त मनोरम दृश्य हैं दशरथ की मृत्यु तथा उनके अन्तिम संस्कार के दृश्य भी उल्लेखनीय हैं। दक्षिण भारत में प्रचलित रामकथा के अनुरूप इन दृश्यों का अंकन किया गया।[13,14]

वैष्णव तथा शैव मतों का दक्षिण भारत में असाधारण विकास हुआ। इस विकास के सम्यक अध्ययन के लिए दक्षिण भारत की मूर्तिकला अत्यन्त सहायक सिद्ध हुई है मूर्ति विज्ञान की दृष्टि से अर्द्धनारीश्वर तथा शिव के अन्य रूप स्कंद-सन्ब्रह्मण्य, ब्रह्मा, विष्णु आदि देवों की मूर्तियों का निर्माण प्रमाणिकता तथा रोचकता के साथ सम्पन्न किया गया। नदी-देवियों के रूप में गंगा-यमुना की प्रतिष्ठापना उत्तर भारत में गुप्त-काल में हो चुकी थी। इन देवियों को पवित्रता और मंगल का प्रतीक माना जाने लगा। दक्षिण भारत को ललित कलाओं में देश की एकता और अखण्डता के सूचक विविध तत्त्वों को सफलता के साथ रूपायित किया गया।

निष्कर्ष

चोलों का शासन काल सांस्कृतिक उपलव्यियों की दृष्टि से अत्यन्त समृद्ध रहा है। ये उपलब्धियों स्थापत्य और भाषा साहित्य सभी क्षेत्रों में उत्कृष्ट थीं। इन्हें निम्न शीर्षकों में रखा जा सकता है।

| ISSN: 2582-7219 | www.ijmrset.com | Impact Factor: 5.928|

| Volume 4, Issue 7, July 2021 |

| DOI:10.15680/IJMRSET.2021.0407034 |

मन्दिर निर्माण कला-चोलों ने मंदिर निर्माण के क्षेत्र में एक नई शैली 'द्रविड़ शैली' का आरम्भ किया। इस शैली की सबसे बड़ी विशेषता थी कि अब तक पल्लवों द्वारा जो मन्दिर बनाए जाते थे, वे पहाड़ों को काटकर बनते थे। पर चोलों ने मंदिर निर्माण की स्वतन्त्र संरचनात्मक शैली विकसित की। इस शैली में गर्भगृह के ऊपर पिरामिडनुमा पाँच सात मंजिलों वाली आकृति होती थी, जिन्हें विमान कहते थे। परन्तु इनके शिखर नुकीले न होकर चपटे होते पे और सबसे ऊपर ढोलक जैसी आकृति होती थी गर्भगृह के सामने और कभी-कभी चारों ओर छोटे व चौकोर-स्तम्भों पर बनी बातें होती थी, जिन्हें मंडप कहते थे। इन 'मंडपो में दीवार नहीं होती थी। विमान की बहरी दीवारों और गर्भगृह की दावारों पर सुन्दर नक्काशी व चित्र त्कीर्ण किए जाते थे। इस शैली की एक और विशेषता पी-इनके भव्य-प्रवेश द्वार। प्रवेश द्वार की छत भी विमान की तरह यहुत उँची होती भी, जिसे गोपुरम कहते थे। कालांतर में तो 'गोपुरम है विमान से ज्यादा ऊँचे और नक्काशीयुक्त होने लगे। इस शैली का आरम्भिक नमूना कांची का कैलाशनाथ मन्दिर है और सबसे उत्कृष्ट नमूना राजराज प्रथम द्वारा 1010 ई० में तंजौर में निर्मित 'राजराजेश्वर ना हदेश्वर मन्दिर है। अन्य प्रमुख मन्दिरों में महाबलिपुरम् व गंगईकोंडचोलपुरम मन्दिर (राजेन्द्र प्रथम) हैं। इन मन्दिरों में देवी-देवताओं की मूर्तियों के साथ राजा व रानी की मूर्तियां भी होती थी मंदिरों की दीवारों व स्तम्भों पर राजा की प्रशस्ति उत्कीर्ण रहती थी। [15,16] मन्दिरों का महत्त्व-मन्दिरों का सिर्फ धार्मिक महत्व ही न ही था उनका सामाजिक व आर्थिक महत्त्व भी था। ये मन्दिर शिक्षा व संगीत-नृत्य के आयोजन के फेन्द्र थे। महासभा की बैठक भी मंदिर में होती थी मन्दिरों की व्यवस्था के लिए राजा और जनता की ओर से बड़े के पैमाने पर अनुदान दिए जाते थे। इससे धीरे-धीरे मन्दिरों फे पास बहुत अधिक संपत्ति जमा हो गई और कृषि व व्यापार के विकास के लिए प्राण भी देने लगे। उनके द्वारा जनकल्याण की योजनाएं भी चलाई जाती थीं।[20]

देवदासियों की अवस्था-मन्दिरों में देवदासियों की बहुत बड़ी संख्या होती थी। ये नृत्य-संगीत में अत्यन्त निपण व समाज में सम्मान्य होती पी| इसी से कुलोतुंग प्रथम द्वारा उन पर अपने अधिकार का दावा करने पर जनता ने उसका विरोध किया था। देवदासियों के नृत्य से ही भरतनाट्यम नृत्य-शैली का विकास हुआ। मूर्तिकला-मूर्तिकला भी चलो की उच्च कोटि की थी। मन्दिरों में स्थापित व दौवारों पर उत्कीर्ण मूर्तियों तो इसका प्रमाण है ही, अवणयेलगोला में स्थित गोमतेवर को विशाल प्रतिमा सका उत्कृष्टता का स्पष्ट प्रमाण है। चोलों के समय में कांसे को नटराज की मूर्तियाँ भी बड़े पैमाने पर बनती थी जिसे सजीवता च कलात्मकता सल्लेखना है। धार्मिक सहिष्णुता-चोली के धार्मिक सहिष्णुता भी उल्लेखनीय है। चोल शासक यद्यपि मुख्यत: शैव मत को ही (मानने वाले) अधिक से, तथापि वैष्णव मत के विकास में भी उन्हें महत्त्वपूर्ण योगदान किए। शिव मन्दिरों के साथ-साथ उन्होंने वैष्णव मन्दिरों की भी अनुदान दिए। बौद्ध व जैन मतों की उपेक्षा भी नहीं की जाती थी और सबसे महत्त्वपूर्णबात थी कि राजा अपनी निरंकुशता पर धर्म का अंकुश बड़े ही स्पष्ट रूप में स्वीकार का चलता था।[17,18]

भाषा एवं साहित्य का विकास-भाषा एवं साहित्य के विकास की दृष्टि से भी यह काल अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। वैसे तो संस्कृत ही इस काल में उच्च संस्कृति का प्रतीक रही, पर तमिल, तेलुगू व कन्नड़ भाषाओं का भी बहुत विकास हुआ। कम्बन के समय (1वीं सदी के उत्तरार्द्ध से 12वीं सदी के आरम्भ तक) में तमिल साहित्य का बहुत विकास हुआ। कम्बन रामायण का तमिल में अनुवाद किया। कम्बन का समय तमिल साहित्य का स्वर्णकाल माना जाता है।[19] पुलगेन्दी ने नलदमयन्ती की कथा पर आधारित नलवेम्बा' की रचना की। कुट्टन, यजयगोंडू, कल्लाडनार, ओट्टाकुटन, अव्वई (कवयित्री) आदि अन्य प्रमुख तमिल कवि थे। शैव भक्त संतों की भक्ति रचना ग्यारह खंडों में तिरुमरई के रूप में संकलित है। कन्नड़ साहित्य का भी इस काल में बहुत विकास हुआ। इसमें जैन-त्रिरत्न-पम्पा, पोना व रण्ण की रचनाएँ सबसे उल्लेखनीय हैं। और वास्तव में कन्नड़ भाषा का विकास ही इस युग की मुख्य विशेषता है, क्योंकि तमिल भाषा का विकास भी इसी काल में हुआ। नन्नैया ने महाभारत के अनुवाद का कार्य आरम्भ किया, जिसे तिकन्ना ने पूरा किया।[20]

संदर्भ

1) विजयालय चोल 848-871(?)
2) आदित्य १ 871-907 -
3) परन्तक चोल १ 907-950
4) गंधरादित्य 950-957
5) अरिंजय चोल 956-957
6) सुन्दर चोल 957-970
7) उत्तम चोल 970-985
8) राजाराज चोल १ 985-1014
9) राजेन्द्र चोल १ 1012-1044

| ISSN: 2582-7219 | www.ijmrset.com | Impact Factor: 5.928|

| Volume 4, Issue 7, July 2021 |

| DOI:10.15680/IJMRSET.2021.0407034 |

10) राजाधिराज चोल १ 1044-1054
11) राजेन्द्र चोल २ 1054-1063
12) वीरराजेन्द्र चोल 1063-1070
13) अधिराजेन्द्र चोल 1067-1070
14) चालुक्य चोल
15) कुलोतुंग चोल १ 1070-1120
16) कुलोतुंग चोल २ 1133-1150
17) राजाराज चोल २ 1146-1163
18) राजाधिराज चोल २ 1163-1178
19) कुलोतुंग चोल ३ 1178-1218
20) राजाराज चोल ३ 1216-1256
21) राजेन्द्र चोल ३ 1246-1279

INNO SPACE
SJIF Scientific Journal Impact Factor
Impact Factor: 5.928

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA

निस्केयर NISCAIR

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

IN SCIENCE, ENGINEERING AND TECHNOLOGY

9710 583 466 9710 583 466 ijmrset@gmail.com

www.ijmrset.com